समयसार गाथा सात।

अब प्रश्न यह होता है कि दर्शन-ज्ञान-चारित्र को आत्मा का धर्म कहा गया (है)। किन्तु यह तो तीन भेद हुए और भेदरूप भावों से आत्मा को अशुद्धता आती है। क्या कहते हैं ? छठवीं गाथा में - ऐसा कहा है कि आत्मा ज्ञायक स्वरूप, ध्रुव अभेद उसपर दृष्टि देने से सम्यग्दर्शन होता है। कर्म के निमित्त से जो अशुद्धता होती है, उससे (धर्म) होता नहीं, उसके लक्ष्य से होता नहीं। प्रथम धर्म की सीढी सम्यग्दर्शन वह त्रिकाल ज्ञायक भाव चैतन्यस्वभाव नित्य एकरूप, उसके आश्रय से होता है, इसमें कर्म के निमित्त से अशुद्धता आती है यह उसमें है नहीं। यह चौदह गुणस्थान के भेद उसमें है नहीं, ऐसी चीज को अंतर-दृष्टि करने से सम्यग्दर्शन होता है, यह बात है।

तब शिष्य का प्रश्न है कि यह तो ठीक परंतु एक स्वरूप भगवान ज्ञायक स्वरूप

में दर्शन-ज्ञान-चारित्र ऐसे तीन भेद होते हैं न ? कर्म के निमित्त से अशुद्धता और चौदह गुणस्थान का भेद वह तो है नहीं उसमें, वह तो ठीक, परंतु वह चीज जो है चैतन्यस्वरूप, उसमें दर्शन-ज्ञान-चारित्र के तीन भेद होते हैं, तब भेद भी अशुद्धता का कारण है, समझ में आया ? आहाहाहा ! सूक्ष्म बात है भाई ! उसका उत्तर क्या है ? भेद करने से भी अशुद्धता होती है। भेद तो है, सम्यग्दृष्टि को ज्ञान-दर्शन-चारित्र तीनो है और तीन का भेद पाड़ने से भेद के लक्ष्य से, भेद के कारण से तो अशुद्धता होती है। आहाहा ! सूक्ष्म गाथा है। इसकी जिज्ञासा जिसको है कि आत्मा ज्ञायक चैतन्य शुद्ध ध्रुव स्वरूप, उसके आश्रय से सम्यग्दर्शन न होता है, तब इन तीन भेदों में तो अशुद्धता आती है ? - ऐसा शिष्य का प्रश्न है, अंतर से समझने को (प्रश्न है) उसका उत्तर देने में आता है।

ववहारेणुवदिस्सदि णाणिस्स चरित्त दंसणं णाणं।
ण वि णाणं ण चरित्तं ण दंसणं जाणगो सुद्धो।।७।।

चारित्र, दर्शन, ज्ञान भी, व्यवहार कहता ज्ञानिके।
चारित्र नहिं, दर्शन नहीं, नहिं ज्ञान, ज्ञायक शुद्ध है।।७।।

गाथार्थ :- ज्ञानी को अर्थात धर्मी को... आहाहा ! धर्मी उसे कहते हैं कि जिसकी दृष्टि ज्ञायक चैतन्य अभेद ऊपर स्थित है, और उससे उसको सम्यग्दर्शन-ज्ञान हुआ तब इस धर्मी को ज्ञानी को धर्मी को... उसमें पण्डित लिखा है, पण्डित पुरुष को - ऐसा लिखा है और हिन्दी में मूल तो ज्ञानी को कहना है। पण्डित पुरुष को अर्थात ज्ञानी को धर्मी को अर्थात पण्डित पुरुष को पण्डित पुरुष अर्थात जिसकी दृष्टि ज्ञायक ऊपर है, यह समकिती है ज्ञानी है उसको चारित्र-दर्शन-ज्ञान यह तीन भाव व्यवहार से कहे जाते हैं। आहाहा ! दया, दान, व्रत, भक्ति, पूजा यह तो अशुद्ध... यह तो निकाल दिया छठवीं (गाथा) में, कि उनके लक्ष्य से सम्यक्त्व होता नहीं, और उसके आश्रय से होता नहीं उससे होता नहीं। यहाँ अब - ऐसा कहते हैं कि... आहाहा ! ऐसी बात ले जाना।

चैतन्य ज्ञायक मूर्ति अभेद उसको चारित्र आदि तीन भाव कहना व्यवहार है, असत्यार्थ है, अभूतार्थ है, वास्तव में एक में तीन भेद है नहीं। समझ में आता है ? सूक्ष्म विषय है आहाहा ! सम्यग्दृष्टि को धर्म के प्रथम सोपानवाले को, ज्ञायक स्वरूप जो अभेद चैतन्य है उसकी दृष्टि वहाँ ज्ञायक ऊपर है, एवं अशुद्धता की दृष्टि नहीं और अशुद्धता का लक्ष्य नहीं और अशुद्धता से सम्यक्त्व होता है - ऐसी मान्यता नहीं।

अब यहाँ आया, एकरूप चैतन्यस्वरूप जो है ज्ञायक, इसमें अनंतगुण अंदर है

परंतु वह तो पी गया अर्थात अंदर अभेदरूप है, अभेद की दृष्टि करने से दर्शन-ज्ञान-चारित्र भेद दिखते नहीं, आहा ! ऐसी बात है। इस कारण से धर्मी को दर्शन-ज्ञान-चारित्र कहना वह व्यवहार है, अर्थात दर्शन-ज्ञान-चारित्र के भेद से ज्ञायक ऊपर दृष्टि जाती है - ऐसा नहीं, और दर्शन-ज्ञान-चारित्र रूप भेद के लक्ष्य से और भेद के कारण से ज्ञायक (की) दृष्टि होती है - ऐसा है नहीं। आहाहाहा ! चारित्र-दर्शन-ज्ञान यह तीन भाव व्यवहार से कहे जाते हैं, यह तो कथन की शैली में, जो धर्मी समझते नहीं धर्म को, ऐसी जिज्ञासा (वाले) जीव को तीन बोलसे आत्मा - ऐसा कहने में आया (है) समझ में आया ? परंतु जो आत्मा है, यह तो दर्शन-ज्ञान-चारित्र तीनों (रूप) से अंदर अभेद है, इस ज्ञायक से तीन भेद भिन्न है - ऐसा नहीं आहाहाहा ! समझ में आया ?

सातवीं गाथा सूक्ष्म है। ***वह ज्ञान-दर्शन-चारित्र तो उसमें शक्तिरूप है परंतु भेद करना यह व्यवहार है। आहाहा ! व्यवहार अर्थात उसके आश्रय से विकल्प उत्पन्न होता है, सम्यग्दर्शन उत्पन्न नहीं होता। आहाहा ! इसलिये निश्चय से ज्ञान भी नहीं। धर्मी को ज्ञान भी नहीं दर्शन भी नहीं चारित्र भी नहीं।*** एक स्थानकवासी ने यह पढ़ा, तो कहे लो धर्मी को दर्शन-ज्ञान-चारित्र है ही नहीं ? उनको तो यह खबर नहीं, उनके शास्त्र में यह बात है नहीं। किस अपेक्षा से कहते हैं ? ***दर्शन-ज्ञान-चारित्र द्रव्य में अभेदरूप है वैसे तो अनंतगुण मौजूद है परंतु उनको भेद करके पृथक लक्ष्य में लेना यह व्यवहार है, तब धर्मी को ज्ञायक भाव दृष्टि होने से अभेद में भेद दिखता नहीं।*** फिर भी भेद है, दिखनेवाला अभेद है, अभेद दिखता है उसमें भेद दिखता नहीं, और (जिसे) भेद दिखता है उसे अभेद नहीं दिखता। समझ में आया ? आहाहा !

ज्ञानी को ज्ञान नहीं, चारित्र नहीं, दर्शन नहीं, ठीक ! तो अज्ञानी को होगा ? उसका अर्थ है धर्मी जीव, सम्यग्दृष्टि की दृष्टि ज्ञायक भाव ऊपर है, अभेद ऊपर है, इस कारण उसको भेद है ही नहीं। ज्ञानी को ज्ञान भी नहीं, दर्शन भी नहीं, चारित्र भी नहीं है, तीनों नहीं है, क्योंकि यह तो भेद है, और ज्ञानी की दृष्टि तो ज्ञायक ऊपर अभेद ऊपर है। आहाहाहा ! समझ में आया ? बहुत सूक्ष्म विषय है भाई !

अब, यहाँ तो अरे व्रत करो और तप करो और भक्ति करो एवं इससे कल्याण होगा, यहाँ तो कहते हैं कि यह तो अशुद्ध परिणाम है, अशुद्ध तो लक्ष्य लेने लायक है नहीं, और अशुद्ध से सम्यग्दर्शन होता नहीं, परंतु अभेदवस्तु में अनंतगुण है, परंतु उसके भेद करके लक्ष्य करना उससे सम्यग्दर्शन होता नहीं, ऐसी बात है। आहाहा !

समझ में आया ?

ज्ञानी को ज्ञान नहीं, दर्शन नहीं, चारित्र नहीं, अर्थात तब ज्ञायक शुद्ध है, ज्ञायक शुद्ध ही है, ***सम्यग्दृष्टि की दृष्टि में तो अकेला शुद्ध ज्ञायक है। भेद है, राग है वह जानने लायक है, आदरणीय नहीं। आहाहा ! आदरणीय ज्ञायक शुद्धचैतन्यवस्तु अभेद यह ज्ञानी को ज्ञायक शुद्ध एक ही है।*** आहाहा !

टीका :- यह गाथा का अर्थ किया। समझ में आता है ? `**इस ज्ञायक आत्मा को...**' यह भगवान ज्ञायक स्वरूप, द्रव्यस्वरूप, शुद्धचैतन्यघन अनाकुल आनंद का कंद प्रभु, यह उसको `**बंध पर्याय के निमित्त से...**' कर्म के निमित्तरूप बंध के पर्याय के निमित्त से `**अशुद्धता से तो दूर रहो...**' अशुद्धता की तो बात यहाँ है ही नहीं। आहाहा ! अशुद्धता उसमें है - यह बात है ही नहीं - और अशुद्धता के लक्ष्य से सम्यग्दर्शन होता है, यह बात तो है ही नहीं। तथा अशुद्धता के कारण से दर्शन शुद्ध होता है यह तो है ही नहीं। आहाहा !

किन्तु उसको दर्शन, ज्ञान और चारित्र भी विद्यमान नहीं है। आहाहा ! धर्मी जीव ज्ञायकभाव अकेला शुद्ध चैतन्य ज्ञायकभाव उसकी दृष्टि में तीन भेद नहीं है, समझ में आया ? दृष्टि में तो ज्ञायक एक शुद्ध है। आहाहाहाहा ! ***अभेद ज्ञायक वस्तु वह सम्यग्दर्शन का विषय... दर्शन, ज्ञान और चारित्र भेद भी ज्ञानी को नहीं, अर्थात ज्ञानी का यह विषय नहीं, अथवा सम्यग्दर्शन उसके आश्रय से होता नहीं। इसलिये सम्यग्दर्शन का विषय नहीं।*** आहाहा ! नेमिचन्द्रभाई ! ऐसी बातें है। है ? आहाहा !

एकरूप स्वरूप ज्ञायक, भले अंतर में धर्म अनंत है परंतु वस्तु एक है। एक ऊपर दृष्टि देने से अशुद्धता तो लक्ष्य में आती नहीं, परंतु दर्शन, ज्ञान, चारित्र का भेद भी लक्ष्य में आता नहीं। आहाहा ! ऐसी बात है। उसको अर्थात ज्ञानी को अथवा ज्ञायक में, ज्ञायक वस्तु जो शुद्ध चैतन्य... एकरूप जो ध्रुव द्रव्य स्वभाव उसको दर्शन ज्ञान और चारित्र भी... अभेद में नहीं है। आहाहा ! दर्शन, ज्ञान, चारित्र विद्यमान नहीं।

मोक्ष का मार्ग जो है, वह भी ज्ञायक में विद्यमान है ही नहीं। आहाहा ! समझ में आया ? `**उसके दर्शन-ज्ञान-चारित्र भी** (**विद्यमान**) **नहीं**' अर्थात ? अशुद्धता तो है ही नहीं, पुण्य और पाप का भाव दया, दान, व्रत, भक्ति यह तो ज्ञायक में है ही नहीं, पर यह (दर्शन-ज्ञान-चारित्र) भी नहीं इसलिए `भी' लगाया, यह भी नहीं। आहाहा ! `**दर्शन-ज्ञान-चारित्र भी नहीं...,**' आहाहा ! क्यों ? क्यों नहीं विद्यमान ? एक ज्ञायक भाव विद्यमान है, और तीन, विद्यमान एक में नहीं, क्यों ? आहाहा !

कारण क्या ? `**कि अनंत धर्मोंवाले एक धर्मी में...**' धर्मी नाम आत्मा एक ज्ञायक

अनंत धर्मोंवाले एक धर्मी, धर्म अनंत, ज्ञान, दर्शन, चारित्र आदि। वस्तु धर्मी एक, वस्तु एक ज्ञायक धर्मी, उसमें धर्म अनंत। समझ में आया ? अनंतधर्मोंवाले एक धर्मी में - ऐसा लिया न ? आहाहा ! है तो यह प्रभु ज्ञायक में सामान्यगुण अनंत, विशेषगुण अनंत ऐसे अनंत गुणवाले धर्मी में ऐसे अनंतधर्म जो गुण है, धारण कर रखा है - ऐसा एक धर्मी, धर्म अनंत धर्मी एक। आहाहा ! समझ में आया ? यह तो दूसरी बात है भाई अभ्यास नहीं करें (तो समझ में कैसे आए)। आहाहा ! प्रभु चैतन्यमूर्ति भगवान... शरीर से तो भिन्न, वाणी से भिन्न, अशुद्धता के परिणाम से भिन्न पर अभेद में धर्मों का भेद भी भिन्न, भेद भी उसमें नहीं। आहाहा ! - ऐसा कहा कि अनंत धर्मोंवाले... क्या कहा ? एक धर्मीद्रव्य ज्ञायक यह अनंत धर्मोंवाले... आहाहा ! एक धर्मी अनंतगुणवाला एक गुणी अनंत शक्तिवाले एक शक्तिमान। आहाहा ! इस धर्मी में, एक धर्मी में अनंतधर्म, अनंतधर्म है न अंदर ? अनंतगुण है, नहीं है - ऐसा नहीं, परंतु `**ऐसे एक धर्मी में जो निष्णांत नहीं...,**' एक धर्मी का जिसको ज्ञान नहीं, अनंत धर्म, स्वभाव, गुणवाले एक गुणीवस्तु धर्मी उसका जिसको ज्ञान नहीं, निष्णात नहीं। निष्णात का अर्थ वह तुम्हारे में नहीं ? इसमें निष्णात है, इस बात में निष्णात है, एक वस्तु अनंतधर्मवाली एक वस्तु... जो सम्यग्दर्शन का विषय ऐसे एक धर्मी में निष्णात नहीं, जिसको खबर नहीं, जिसको एक धर्मी का एक वस्तु ज्ञायक का ज्ञान नहीं... आहाहाहा !

`**ऐसे निकटवर्ती शिष्य को...**' क्या कहते हैं ? आहाहा ! एक तो जो शिष्य गुरु के पास आया उसको वह कहते हैं, समझ में आया ? आहाहा ! उसके घर (घरमें) समझाने को जाते नहीं। (श्रोता :- अपन तो मुंबई जाते है) यह तो सुननेवाले आते है, सुननेवाले हैं उन्हें सुनाते हैं।

निकटवर्ती के दो अर्थ हैं। एक तो गुरु के पास समझने आया है, उनके नजदीक है, दूसरी तरह कहें तो निकटवर्ती... भव का अंत का किनारा आया - ऐसा यह निकटवर्ती जीव है। आहाहा ! पण्डितजी। समझ में आता है भैया ? ऐसी बात है। दिगम्बर संत। आहाहा ! दूसरी (जगह) (ऐसी बात) मिलती नहीं, बहुत परिवर्तन हो गया (है) परिवर्तन हो गया यह तो। आहाहा ! एक धर्मी अर्थात द्रव्य यह अनंतधर्मवाला उसको एक धर्मी तो एकरूप वस्तु है, उसका जिसको ज्ञान नहीं। निष्णांत नहीं, ख्याल नहीं, उस तरफ का झुकाव नहीं - ऐसा निकटवर्ती शिष्य सुनने को आया है, सुनने को आया है, ऐसे निकट... उसको घर पर समझाने को जाते नहीं। एक बात।

दूसरी बात यह शिष्य निकटवर्ती है, अल्पकाल में संसार का अंत लानेवाला है - ऐसा शिष्य सुनने को आया है। आहाहा ! आहाहा ! गजब बात है। दिगम्बर

संतो की वाणी। केवलज्ञान का अनुसरण करनेवाले, ऐसी बात कहीं है नहीं। आहाहा ! लोगों को दुःख लगे, दूसरे संप्रदाय को बापू ! एक एक अक्षर तो देखो और एक-एक भाव तो क्या (चीज है)। सुनने को मिलता नहीं। आहाहा ! भाई ने कहा न, आहाहा ! बात तो ऐसी है भाई !

अनंत अनंत गुणों का गोदाम प्रभु एक, अनंत शक्ति का संग्रहालय एक, अनंत धर्मों को धारण करनेवाला धर्मी एक, आहाहा ! - एक का जिसको ज्ञान नहीं, ऐसी एक चीज ज्ञायक स्वरूप प्रभु, उसका जिसको ज्ञान नहीं - ऐसा नहीं कहा कि भेद का ज्ञान नहीं और निमित्त का ज्ञान नहीं कि छह द्रव्य का ज्ञान नहीं... आहाहा ! यहाँ तो एक वस्तु प्रभु नित्यानंद आत्मा जिसमें अनंतधर्म हैं, ऐसे अनंतगुण हैं, यह अनंतगुणों को धरनेवाला एक - ऐसा जो द्रव्य - ऐसा जो धर्मी उसमें निष्णात नहीं, और दूसरी बातो में भले पण्डित हो। आहाहाहा ! ऐसी बातें है बापू !

दिगम्बर संतो की बातें तो केवली के पदानुगामी की बातें हैं। केवलज्ञान के रस्ते पर चलनेवालों की... यह बात केवलज्ञान में ले जाने के लिये है। आहाहा ! भगवंत ! एकबार सुन ! तेरी चीज पर से तो भिन्न, रागरूप व्यवहार से तो भिन्न, परंतु अनंतगुणों का (भेद) एकरूप, तो गुण (भेद) से भी भिन्न, अभिन्न है यह तो। आहाहा ! यह गुणी और यह उसका गुण - ऐसा भेद भी जिसमें नहीं। आहाहाहा ! गाथा बहुत ऊँची है। जैनदर्शन का मक्खन जैनदर्शन अर्थात वस्तु विश्वदर्शन। जैनदर्शन कोई संप्रदाय नहीं वस्तु का स्वरूप जैसा है वैसा कहा, (है) वैसा अनुभव किया, आहाहा ! यह दिगम्बर जैनदर्शन हो ! दूसरी जगह ऐसी बात है नहीं। आहाहा ! लोगों को दुःख लगे (परन्तु) दूसरा क्या करें ? मार्ग तो प्रभु का यह है। आहाहाहा !

जिसके पास जाने से आनंद उत्पन्न हो - ऐसा भगवान आत्मा एकरूप वस्तु उसमें जो निष्णात नहीं, उसका ज्ञान नहीं, एकरूप वस्तु का ज्ञान नहीं। हैं एकरूप वस्तु में अनंत धर्म, अनंतगुण फिर भी एकरूप का जिसको ज्ञान नहीं - ऐसा कहा। आहाहाहा !

छोटाभाई को यह समझायेगा हो ध्यान रखना, बड़ेभाई को जचती है, आहा ! मार्ग प्रभु (का) यह है। आहाहा !

पहले उसका यथार्थ ज्ञान तो करे, आहाहा ! फिर प्रयोग करे। आहाहा ! ओहोहो ! अमृतचन्द्राचार्य !! कुन्दकुन्दाचार्य दो हजार वर्ष पहले भगवान के पास गये थे आठ दिन रहे थे और श्रुतकेवली केवलियों द्वारा कहा और सुना तथा अनुभव में आया था। विशेष स्पष्ट अनुभव हुआ, (वहाँ से) आने के बाद यह शास्त्र बनाया। तीन लोक के नाथ सीमंधर भगवान - ऐसा कहते हैं। आहाहाहा ! गजब बात है। अनंत धर्म

सिद्ध किये, अनंत गुण... एक वस्तु में अनंत गुण तो है, आत्मा एक ही गुणवाला है - ऐसा नहीं, है तो अनंत गुण, अनंत धर्म कहो कि अनंत गुण कहो, परंतु यह अनंत गुणों का धरनेवाला एक, एक ऊपर जिसका ज्ञान (नजर) नहीं। आहाहाहा ! यह गुणी और गुण को अनंत गुणों का जिसे ज्ञान, यह कहीं वस्तु नहीं - ऐसा कहते हैं, हाँ।आहाहा !

भाई, मोहनलालजी नहीं आते भाई उनकी पत्नी को कहते हैं वह हो गया है। कोई कहता था कल लाड़न्वाले भाई, मोहनलालजी आनेवाले थे तथा उनकी स्त्री को, क्या कहलाता यह ? पक्षघात हो गया है। कहो ! यहाँ मुश्किल से मिला सुनने का संयोग उसमें - ऐसा विघ्न, संसार, संसार - ऐसा है। आहाहा ! मोहनलाल पाटनी है बहुत प्रेमी है, आहाहा !

यहाँ कहते हैं, एक-एक शब्द में बहुत गंभीरता। बहुत गंभीरता है ! अनंत धर्म सिद्ध करना है, आत्मा एक है तो धर्म गुण अनंत हैं, परंतु अनंत धर्मों को धारण करनेवाला एक, इस एक का जिसको ज्ञान नहीं - ऐसा कहते हैं। आहाहा ! हें ? आहाहाहा ! अनंत गुणवाला जीव इसका जिसे ज्ञान है नहीं। यह भेद का ज्ञान है यह तो व्यवहार है। यह अनंतगुणों को धारण करनेवाली एक वस्तु है प्रभु ! इसका जिसे निष्णात ज्ञान नहीं, ऐसे निकटवर्ती शिष्य, आहाहा ! वह भी नजदीक अपना आत्मा के लिए सुनने को आया है, अन्य कोई चीज नहीं। आहाहा ! आहाहा ! अपना आत्मा का हित क्यों (कैसे) हो - ऐसा (इसलिये) सुनने को आया है, निष्णांत नहीं एक द्रव्य कैसा है उसका ज्ञान नहीं परंतु - ऐसा भाव उसको है कि मेरा कल्याण कैसे हो - ऐसा निकटवर्ती-नजदीक (पास) में आया और संसार (भी) जिसका निकट है अंत। आहाहा ! अब भव के अंत की स्थिति जिसको नजदीक है। आहाहा !

`**ऐसे निकटवर्ती शिष्य को, धर्मी को बतानेवाला**' धर्मी, धर्मी, द्रव्य स्वभाव जो ज्ञायक एकरूप इसको बतानेवाले `धर्मी को बतानेवाले' द्रव्य को बतलानेवाला, ज्ञायक को दिखानेवाला, अभेदस्वरूप वस्तु जो है उसको बतानेवाला `**कितने ही धर्मों के द्वारा**' किन्हीं-किन्हीं धर्म द्वारा... सभी धर्म तो एक साथ (बता सकते) नहीं परंतु मुख्य कितने ही धर्म व्यवहार मात्र से ही भेद कथन मात्र से, भेद के कथन मात्र से... उसमें अंदर भेद है नहीं। आहाहा ! आहाहाहा !

व्यवहारमात्र से ही, यहाँ ही शब्द लिखा है, व्यवहारमात्र से ही, भेद करके समझाना है। कि व्यवहार मात्र से ही। आहाहाहा ! समझ में आया ? भेद समझाना है ? समझना है अभेद। परंतु भेद करके समझना... तो व्यवहारमात्र से ही भेद करके समझना है... आहाहा ! व्यवहारमात्र से ही - ऐसा उपदेश है। यहाँ तो - ऐसा उपदेश

है, कथन है न ! यहाँ तो... आहाहा ! भाव तो भाव भले (परन्तु) उपदेश - ऐसा है। व्यवहारमात्र से ही - ऐसा उपदेश आया कि एक वस्तु में निष्णांत नहीं और एक वस्तु में अनंत धर्म है उनका जिसको ज्ञान नहीं... आहाहा ! बहुत गंभीर - ऐसा उपदेश है कि ज्ञानी को, गाथा में है न ? गाथा में है, ज्ञानी को धर्मी को सम्यग्दृष्टि के विषय में, सम्यग्दृष्टि के ध्येय में धर्मी को... आहाहा ! `ज्ञानी के दर्शन है, ज्ञान है चारित्र है' - ऐसा भेद करके बताया है। समझ में आया ? आहाहा ! भले अभी सम्यग्दर्शन नहीं पाया। परंतु सम्यग्दर्शन पानेवाले को भेद करके दिखाया कि देखो ऐसा भगवान आत्मा है, आत्मा आत्मा कहने से नहीं समझ सकें, यह धर्मी है, द्रव्य है - ऐसा कहने पर (भी) न समझ सके। एक रूप को तो समझते नहीं, एक द्रव्य का तो ज्ञान नहीं। आहाहाहाहा ! - ऐसा सम्यग्दर्शन पाने के लायक है और निकटवर्ती शिष्य है। आहाहाहा ! भैयाजी ! - ऐसा उपदेश है। आहाहा ! परमसत्य है, आहाहा ! पण्डितजी का परिचय है न ? आहा ! यह बात कहाँ है प्रभु ! उसका एक बार ज्ञान तो सच्चा करे ! आहाहा !

धर्मी को बतानेवाले... व्यवहार से, व्यवहार समझना नहीं, व्यवहार से धर्मी (अभेद) द्रव्य को समझना है (परंतु) लक्ष्य तो वहाँ ले जाना है परंतु अकेले द्रव्य का ज्ञान नहीं और चैतन्य स्वरूप अखण्ड अभेद है इसका ज्ञान नहीं तब उसको... आहाहाहा ! **`उपदेश करते हुये धर्मी को बतलानेवाला'** भी हो। बतलाना तो धर्मी द्रव्य, द्रव्य को दिखलानेवाले उपदेश में... आहाहा ! यहाँ लोग ऐसा निकाले (कहें) देखो व्यवहार से निश्चय जानने में आता है कि नहीं ? अरे परंतु व्यवहार से समझाते हैं जो समझते है वे यह द्रव्य का आश्रय लेते हैं तब समझते हैं, भेद का आश्रय भी उसको छूट जाता है। समझ में आया ? परन्तु समझाने को दूसरी वस्तु कहाँ से लायें ?

एकरूप अनंत आनंद-कंद प्रभु ! सहजानंद चैतन्य आनंद का कंद प्रभु पूर्णानंद परमात्मा स्वरूप खुद स्वयं - ऐसा जिसकी दृष्टि में नहीं है इसका जिसके अंदर (से) माहात्म्य आया नहीं। इसको उसके धर्मों में धर्मी को बतानेवाला, धर्म की कितने ही धर्मों से बात करते हैं सभी धर्मों से तो नहीं समझा सकते। खास-खास मुख्य बिन्दु कहते हैं। आहाहा ! है ? `कितने ही धर्मों के द्वारा'... देखो इसमें `ही' है `उपदेश करते हुये आचार्य...' आहाहा ! आचार्यो ने उपदेश किया... आहाहाहाहा ! **`यद्यपि धर्म और धर्मी का स्वभाव से अभेद है,'** उष्णता और अग्नि कोई भिन्न नहीं... ऊष्णता और अग्नि अभिन्न है। इसीप्रकार गुण और गुणी कोई भिन्न नहीं गुण और गुणी अभेद है। समझ में आया ? आहाहा !

जैसे यह लकड़ी है, यह सफेदाई चिकनाई आदि उसमें अभेद है। परंतु समझाने

को यह क्या है पिलास्टिक है पिलास्टिक क्या कहलाती यह ? यह सफेद है यह सफेदी है वह कहीं भिन्न होती है उसमें से ? चिकनाई है वह तो अभेद है सभी, पर इसको भेद करके बताना है। आहाहा ! अकेले पिलास्टिक को कैसे कहें, तब कहें चिकना है सफेद है वजनवाला है चमकदार है, चमक-चमक है यह उसमें है तो अभेद, परन्तु भेद करके समझाना है।

इसीप्रकार भगवान आत्मा में अनंतगुण हैं तो अभेद परन्तु जो अभेदरूपी एक द्रव्य को नहीं जानता, उसको भेद करके बतलाना है वह। भेद करके भेद बताना है (- ऐसा) नहीं। आहा ! ***इसमें कोई - ऐसा माने कि व्यवहार से निश्चय समझा जाता है न ? परंतु इसका दूसरा कोई उपाय नहीं। आहाहा ! और वह भी उस समझने योग्य धर्मी को समझाते हैं। व्यवहार से समझाते हैं परंतु लक्ष्य कराते है धर्मी (अभेद) ऊपर। आहाहा ! धर्मी ऊपर दृष्टि जाये तब व्यवहार से आचार्यों ने समझाया उससे समझा - ऐसा कहा जाता है।*** आहाहा !

ओहोहो ! कैसी गाथा है ? कहीं है नहीं। आहाहा ! जिसके एक-एक शब्दों में कितनी गंभीरता है, तो दिगम्बर संत छद्मस्थ, छद्मस्थ है न ? यह तो केवली नहीं है आहाहा ! परंतु वीतरागी संत है, तीनकषाय का तो अभाव है कुन्दकुन्दाचार्य, अमृतचन्द्राचार्य, आहाहा ! क्षण में सातवां क्षण में छठवां, अंतर्मुहूर्त में हजारों बार छठवां सातवां (गुणस्थान) आता है। फिर भी कहते हैं कि यह नहीं, यह छठवां सातवां भेद (आत्मा) में नहीं। मैं तो ज्ञायक हूँ। यह तो छठवीं गाथा में आ गया। आहाहा !

यहाँ तो कहते हैं कि धर्म का धरनेवाला धर्मी अनंत धर्मों को धारण करता है, परंतु धर्मी को बताना है वहाँ धर्म से बताना है, दूसरा उपाय क्या ? कि देखो दर्शन किसको होता है ? कि आत्मा का विश्वास आता है कि मैं शुद्ध चैतन्य हूँ, किसको ? जड़ को ? राग को ? आहाहाहा ! विश्वास अंदर परमात्मा मैं हूँ - ऐसा विश्वास आता है ? कि किसको ? कि आत्मा को, इसलिये विश्वास द्वारा आत्मा को समझाया... परंतु विश्वास द्वारा समझाया, विश्वास भेद करके समझाया। आहाहाहा !

ज्ञान द्वारा समझाया कि समझो पहले प्रभु जिसकी सत्ता में ज्ञान होता है स्व-पर का, जिसकी सत्ता में स्व पर का ज्ञान होता है, यह ज्ञान वह आत्मा इसप्रकार व्यवहार से भेद करके बताया। आहाहाहा ! इसमें बाद विवाद काम कर सके नहीं यह तो वस्तु ऐसी है, इसमें पण्डिताई का काम नहीं।

(श्रोता :- वाद-विवाद को नियमसार में निषेध किया है) स्वसमय परसमय के साथ प्रभु वाद-विवाद करना नहीं, नियमसार में कहा। ऐसी वस्तु है कैसे बैठे भाई ! यह तो जिसको आत्मा की रुचि हो और आत्मा को समझने की गरज हो, दूसरी

सब पिपासा जिसको घट गई हो। आहाहा !

जैसे आचार्यों का - ऐसा उपदेश है कि धर्मी को अर्थात ज्ञायक, ज्ञायक में दर्शन है ज्ञान है, चारित्र है - ऐसा भेद हुआ, यह व्यवहार से है, आया न यह? व्यवहार मात्र से - ऐसा उपदेश (है) कि धर्मी को दर्शन-ज्ञान-चारित्र (है) आहाहा ! तब कहते हैं कि देखो व्यवहार समझाने में आया है कि नहीं ? निश्चय को व्यवहार कारण हुआ कि नहीं? ना, ना भाई - ऐसा नहीं व्यवहार (से) समझाते हैं निश्चय को वहाँ निश्चय का लक्ष्य है, और ***आचार्य तो कहते हैं कि हम समझाते है न, दर्शन, ज्ञान, चारित्र वह आत्मा परंतु इस व्यवहार का हम भी आश्रय नहीं करते और तुम्हें आश्रय नहीं करना।*** आठवीं गाथा। आठवीं गाथा में आयेगा। आहाहा ! समझ में आया ? ***इस व्यवहार से हम समझाते हैं, परंतु व्यवहार का आश्रय हमें भी अनुसरण नहीं करना, और तुमको भी व्यवहार से समझाते हैं तो भी अनुसरण नहीं करना, अनुसरण तो द्रव्य का करना।*** आहाहा ! ऐसी बात है।

`व्यवहार मात्र से ही - ऐसा उपदेश है कि धर्मी को दर्शन-ज्ञान...' ज्ञायक में दर्शन है ज्ञान है चारित्र का भेद बताया यह व्यवहार से बताया है, ज्ञायक में यह तीन है, यह व्यवहार से कहे हैं। आहाहाहा ! **`किन्तु परमार्थ से देखा जाये`** वास्तव में ज्ञायकभाव, ऐसी वस्तु को देखा जाये **`तो अनंत पर्यायों को एक द्रव्य पी गया है`** आहाहा ! अनंतगुण तो एक अभेद द्रव्य में घुस गये है ! (द्रव्य) अंदर पी गया है, आहाहा ! ***एक द्रव्य अनंत धर्मों को पी गया है अंदर अनंत पर्यायों को एकद्रव्य ही पी जाता है,*** अंदर स्थित ही है, अंदर - ऐसा कहते हैं। इसलिये एकरूप है। वस्तु तो एकरूप है, अनंत धर्म गुण अंदर हों, फिर भी पी गया है अर्थात एकरूप हो गया है द्रव्य। वहाँ गुण और गुणी - ऐसा भेद रहता नहीं। आहाहाहा !

यह सम्यग्दर्शन धर्म की पहला सोपान पाने की कला है। आहा ! शेष सभी निःसार निःसार है आहाहा ! जन्म-मरण कर करके कहीं विश्राम मिला नहीं। विश्राम स्थान प्रभु है वहाँ गया नहीं। आनंदधाम... वहाँ तो गया नहीं और भेद तथा राग में रुककर परिभ्रमण किया। आहाहा ! आहा ! ग्यारह अंग पढ़े नव पूर्व पढ़े तब भी अंतर दृष्टि नहीं की। अभेद ऊपर दृष्टि नहीं की। कुछ न कुछ शल्य अंदर रह गई। रुकने के अनंत प्रकार, छूटने का एक प्रकार। वस्तु एक त्रिकाली उसका आश्रय वह छूटने का उपाय, रुकने के तो अनेक उपाय (हैं), दया से होता है, भक्ति से होता है और व्यवहार से होता है एवं निमित्त से होता है एवं देव गुरु की कुछ कृपा मिल जाये तब होता है, ऐसे अटका (अनंतबार) आहाहाहा ! समझ में आया ?

`इसलिये'... इसलिये क्या ? अनंतपर्या में एक द्रव्य में घुस कर स्थित है अंदर अभेद इसलिये एकरूप किञ्चित् मिले हुए आस्वाद... आस्वाद - ऐसा क्यों कहा ? ***अनंतगुण में प्रत्येक गुण का स्वाद भिन्न है, किंचित एक-मेक मिले हुये... किसी अपेक्षा एक-मेक है, सर्वथा प्रकार अनंत गुण यह एकरूप नहीं। यह प्रत्येक गुण भिन्न-२ स्वादवाला है।*** आहाहाहा ! उसमें सुधारा न ? गुजराती में ? इसमें तो ठीक आया है। यह ठीक आया है, शेष है वहाँ आया था, गुजराती में किंचित एक-मेक मिले हुये, किसी अपेक्षा गुण एक-मेक हैं बाकी, स्वाद भिन्न-२ है **द्रव्य की अपेक्षा एक-मेक है परंतु स्वाद भिन्न है,** भिन्न स्वाद की अपेक्षा। आहाहा ! आस्वादरूप है न ? अभेद है। आहाहा ! एकत्वभाव (रूप) वस्तु का अनुभव करनेवाले ज्ञानी को, एक स्वभाव वस्तु भेद अनेक प्रकार के भले (वें) - ऐसा कहते हैं और गुणों का स्वाद भी भले भिन्न-भिन्न हो, वस्तु अपेक्षा एक है। आहाहाहा !

अब - ऐसा उपदेश (कि) कोई उदाहरण, न्याय और कोई कथा कहानी नहीं मिले। आहाहा ! उदाहरण, न्याय तो कहा। आहाहा ! - ऐसा एक स्वभाव वस्तु का अनुभव करानेवाले ज्ञानी पुरुष को - ऐसा लेना, शीर्षक में लिया था न ? ज्ञानी को दर्शन-ज्ञान-चारित्र व्यवहार से कहे। देखो ऊपर कहा न ? ज्ञानी को दर्शन-ज्ञान-चारित्र व्यवहार से कहा, देखो ऊपर कहा था न ? और (मूल) पाठ में भी है ज्ञानी को ? फिर ज्ञानी यहाँ पण्डित पुरुष हो यही, यहाँ ज्ञानी को दर्शन-ज्ञान-चारित्र व्यवहार से (कहा) (कि) निश्चय से... आहाहाहा ! ज्ञानी पुरुष के न तो दर्शन है। आहाहाहा ! धर्मी जीव की दृष्टि तो द्रव्य ऊपर है। आहाहा ! अखण्ड ज्ञायक स्वभाव अभेद, जो अनंत गुण पी गया है, अंदर पड़े है अंदर, फिर भी दृष्टि तो उनकी एकरूप द्रव्य ऊपर ही है। आहाहा ! ध्रुव की और ध्येय की दृष्टि कभी छूटती नहीं। ध्रुव के ध्यान की दृष्टि... आहाहा !

ज्ञानी पुरुष को- ऐसा वहाँ लेना, ज्ञानी है न, मूल पाठ में है न ? इसलिये लेना, ज्ञानी कहा अर्थात अनुभवी जीव के, द्रव्यस्वभाव में दर्शनज्ञानचारित्र ऐसे भेद दिखते नहीं। अभेद अनुभव में भेद दिखते नहीं। भेद दिखे तो अभेद रहता नहीं और अभेद दिखे उसमें भेद होता नहीं। आहाहा ! समझ में आया ? एक घण्टे का विषय बहुत सूक्ष्म ! नये व्यक्तियों को तो यह लगे कि यह क्या यह कहाँ से लाये, क्या है ? यह तो कहीं धर्म होगा ? (श्रोता :- यह बात सच्ची है दूसरी जगह - ऐसा उपदेश आता नहीं, पूजा करो, व्रत करो, भक्ति करो, स्तुति करो परमात्मा की, मंदिर बनाओ गजरथ निकालो, रथ निकालो रथ, दो-पांच लाख खर्चो। यह तो विद्यारथ (ऊपर) आरूढ़ है। आहा ! ज्ञान में आरूढ़ होना रथ यात्रा है... वह

तो शुभ भाव हो तो बाहर की क्रिया होती हो तो हो, वह कोई धर्म नहीं, शुभ भाव आता है, परंतु वह धर्म नहीं पुण्य बंध का कारण है। आहाहा !

'एक स्वभाव वस्तु का अनुभव करनेवाले ज्ञानी को न तो दर्शन है'... भेदरूप दर्शन और ज्ञान है - ऐसा नहीं, अंतर में (अभेद में) सब स्थित हो, और परिणति में भी तीन भले आओ परंतु दृष्टि के विषय में तीन नहीं। आहाहाहाहा ! ऐसी बात। भगवान कुन्दकुन्दाचार्य आहाहा ! अमृतचन्द्राचार्य। अब वह तुलसी है न ? वह `लोए' निकाल देना चाहते हैं, कहते णमो लोए सव्वसाहूणं, (श्वेतम्बरों के) तेरहपंथी है ना ? तुलसी कहता `लोए' निकाल दो अररर ! णमो सव्वसाहूणम् लोए नहीं, उसे लगे लोक में। सुनो न बापा तुम्हें खबर नहीं। अनादि (का है) द्रव्य संग्रह में तो पेंतीस अक्षर का मंत्र कहा है पैंतीस अक्षर का मंत्र कहा है, द्रव्य संग्रह में। पैंतीस अक्षर, णमो लोए सव्वसाहूणम् तब पैंतीस अक्षर होते है, नेमिचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्ती (का बनाया हुआ) लोग स्वच्छंद (हो गये) स्वयं की अपनी कल्पना से (कुछ भी करते) आहाहा !

सनातन चैतन्य तत्त्व चला आया है, सनातन दिगम्बर मुनियों ने तो परमात्मा की जो वाणी का प्रवाह था वह चलाया है। आहाहा ! एक वस्तुस्वभाव को अनुभव करनेवाले धर्मी को, धर्मी को कहो, ज्ञानी को कहो, पण्डित पुरुषों को कहो, और यही पण्डित है। आहाहा ! जिसने एक द्रव्य स्वरूप की श्रद्धा, ज्ञान किया, वह ही पण्डित है। आहाहाहा ! आहाहा ! शास्त्र का बहुत ज्ञान हो एवं बहुत समझाना आता हो, तो पण्डित है - (ऐसी कोई व्यवस्था नहीं) आहाहाहा ! धर्मी को न तो दर्शन का भेद है उसकी तो अखण्ड ज्ञायक ऊपर दृष्टि है, न दर्शन है न ज्ञान है न चारित्र ही है, देखा ? आहाहा ! एव एक - ऐसा है न ? है न ? ज्ञायक एव एक किन्तु वह तो ज्ञायक एक मात्र शुद्ध ज्ञायक ही है। सम्यग्दृष्टि की दृष्टि तो एक ज्ञायक ऊपर ही है तब वह ज्ञायक मात्र ही है। भेदरूप यह है नहीं। आहाहाहाहा !

दर्शन का विषय ध्येय, यह इसमें ज्ञान-दर्शन-चारित्र भेद नहीं। यह तो एकरूप वस्तु है यह उसका ध्येय है। आहाहाहा ! बाद में जो उसका ज्ञान हुआ अपना दर्शन के आश्रय से यह ज्ञान का स्वपर प्रकाशक जानने का स्वभाव है, तब द्रव्य को भी जाने और पर्याय को भी जाने, परंतु यह जो ज्ञान स्वपर प्रकाशक यह जाने, आदरणीय ध्येय तो दृष्टि का (विषय) एक ही ज्ञायक है। आहाहा !

दूसरी तरह से, एक ज्ञायक का ध्येय और द्रव्य दृष्टि हुई तब उसका ज्ञान - ऐसा हुआ, कि स्वका भी ज्ञान है और रागादि का मंद आदिरूप अशुद्धता हो उसका भी उसको यथार्थ ज्ञान व्यवहार का है, समझ में आया ? अकेले शास्त्र का ज्ञान यह ज्ञान नहीं। आहाहा ! वस्तु का जिसको ज्ञान हुआ, अभेदधर्मी एक द्रव्य

स्वभाव उसकी जिसको दृष्टि हुई तब उसको उसमें भेद नहीं, परंतु उसके साथ जो ज्ञान हुआ वह ज्ञान अभेद को भी जानता है और पर्याय में भेद है दर्शन-ज्ञान-चारित्र, रागादिक है, यह जानते हैं। जानने लायक है... किन्तु वह तो एक मात्र शुद्ध, शुद्ध ज्ञायक ही है शुद्ध ! तीन में तो अशुद्धता आती है - ऐसा यहाँ कहते हैं। दर्शन, ज्ञान और चारित्र यह तो तीन भेद हुये। भेद हुआ... वहाँ सोलहवीं गाथा में मलिन कहा न मेचक, १६वीं गाथा के कलश में, तीन भेद हुये तब मेचक हुआ, मलिन हुआ मलिन कहने का व्यवहार है, क्योंकि उसके आश्रय से राग उत्पन्न होता है। आहाहा ! और त्रिकाली के आश्रय से वीतरागभाव उत्पन्न होता है एवं भेद के आश्रय से राग होता है यह मेचक मलिन है, अभेद है यह निर्मल है आहाहा ! विशेष कहेंगे। (प्रमाण वचन गुरुदेव !)